© 2017 IJSRSET | Volume 3 | Issue 2 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Education

नाथयोग साधना पद्धति

डॉ0 दानपाल सिंह
0177A काजीपुरखुर्द,
गोरखपुर, उ0प्र0।

नाथयोग–साधना : नाथयोग–साधना, अष्टांगयोग–साधना ही है। कुछ सिद्धान्त ग्रन्थों में अष्टांगयोग के स्थान पर षडंगयोग की ही चर्चा मिलती है। इसमें प्रारम्भ के दो अंग यम–नियम उल्लिखित नहीं होते किन्तु इनकी अनिवार्यता साधना में अष्ठांगयोग जैसी ही है। वस्तुतः यम और नियम योगसाधना के प्रारम्भिक सोपान हैं जिनकी अभ्यास के बिना आगे के सोपानों पर आरोहण सामान्य साधकों के लिए सम्भव नहीं है। इसलिय अनुल्लेख के कारण इनको महत्त्वहीन नहीं समझना चाहिये। यद्यपि नाथयोगी भी अष्टांग या षडंगयोग साधना करते हैं तथापि इनकी पहचान योगसाधना के एक विशिष्ट प्रकार हठयोग से बद्धमूल है। इसीलिए नाथयोगी को हठयोगी भी प्रायः कहा जाता है। शास्त्र ग्रन्थों में दो प्रकार के हठयोग की चर्चा मिलती है। एक हठयोग गोरक्षनाथ से पूर्ववर्ती है जिसके उपदेश का श्रेय मृकण्डूपत्रादि को दिया गया है। हठयोग की दूसरी धारा नाथयोगियों द्वारा प्रवर्तित है जिसके प्रतिष्ठापक परमाचार्य के रूप में शिवावतार महायोगी गोरक्षनाथ जी का नाम लिया जाता है।[1]

हठयोग साधारणता प्राणनिरोध प्रधान साधना है।[2] सिद्धसिद्धान्त पद्धति में बताया गया है कि हठ इस दो अक्षर वाले शब्द में प्रथम 'ह' वर्ण सूर्य का वाचक है और दूसरा 'ठ' चन्द्र का वाचक है। इस प्रकार सूर्य और चन्द्र के योग को ही हठयोग कहते हैं। हठयोग के एक अन्य सम्मान्य आचार्य ब्रह्मानन्द के अनुसार उपर्युक्त सूर्य से तात्पर्य प्राणवायु का है और चन्द्र से अपानवायु का। अर्थात् प्राण और अपान वायु का निरोध रूप योग ही हठयोग है।[3] हठयोग का एक अन्य अर्थ भी मिलता है। तदनुसार सूर्य इडानाड़ी को कहते हैं और चन्द्र पिंगलानाड़ी को तथा इडा और पिंगला नाड़ियों को रोकर सुषुम्णा मार्ग से प्राणवायु का संचारण हठयोग है।[4] प्राणतोषिणी ग्रन्थ में बताया गया है कि इडा और पिंगला नाड़ियों को रोकर सुषुम्णा मार्ग से प्राणवायु का संचारण हठ–सिद्धि देने वाला है।[5] हठयोग का सबसे प्राचीन उल्लेख बौद्ध तांत्रिको के गुह्य समाजतंत्र में मिलता है।

गोरक्षनाथ जी ने सिद्धसिद्धान्त पद्धति में आसन को स्वरूप चेतना में स्थित होना कहा है।[6] आसनों की संख्या 84 लाख योनियों के समान ही 84 लाख बतायी गयी है जिनमें 84 आसन सिद्धों और योगियों में अधिक प्रचलित है जिनमें कुछ के नाम इस प्रकार हैं – सिद्ध, पद्म, भद्र, मुक्त, वज्र, स्वस्तिक, सिंह, गोमुक, बीर, धनुष, शव, गुप्त, मत्स्य, मत्स्येन्द्र, गोरक्ष, पश्चिमोत्तान, उत्कट, संकट, मयूर, कुक्कुट, कूर्म, उत्तानमंडूक, वृक्ष, मंडूक, गुरूड, वृशभ, शलभ, मकर, उष्ट, भुजंग और योग नामक 32 आसनों की चर्चा घेरंडसंहिता में आयी है।[7] आसनों के नियमित अभ्यास से शरीर पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है तथा इसके अंग प्रत्यंग के क्रियाशील होने से आरोग्य बढ़ता है इनकी भी विशेष चर्चा आकर ग्रन्थों में देखनी चाहिये। आसनों की चर्चा यद्यपि तीसरे अंग के रूप में पतंजलि ने भी की है किन्तु इस विषय में नाथ योगियों का अपना विशिष्ट योगदान है। कयी नये आसन नाथयोगियों ने स्वयं अपने अनुभव और अभ्यास से प्रचलित किये हैं जिनमें अर्धमत्स्येन्द्रासन, पूर्णमत्स्येन्द्रासन और गोरक्षासन आदि उदाहरणस्वरूप हैं। योगाअंगो में नाथयोगियों की दृष्टि से तुलनात्मकदृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण प्रणायाम है। कहा तो यहाँ तक जाता है कि हठयोग की प्रमुख क्रिया प्राणनिरोध/प्राणायाम ही है। पतंजलिप्रोक्त राजयोग में जो स्थान मनोनिग्रह का है वही स्थान हठयोग साधना में प्राणसंयम या प्राणायाम का है। हठयोग प्रदीपिका में बताया गया है आसन सिद्ध हो जाने पर योगी को विधिपूर्वक प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिये।[8] जब तक प्राणवायु चंचल रहती है अर्थात प्राणयाम के द्वारा इसे स्थिर नही कर लिया जाता है तब तक चित्त भी चंचल ही रहता है और उसका निरोध कथमपि सम्भव नहीं है इसलिए योगी को प्राणायाम द्वारा वायु का निरोध अर्थात कथमपि संभव नहीं है इसलिए योगी को प्राणायाम द्वारा वायु का नि रोध अर्थात सयमन करना चाहिये।[9] जब तक शरीर में वायु स्थित है तभी तक जीवन है प्राण वायु के निकलते ही शरीर का भी मरण हो जाता है इसलिए प्राण का निरोध करना चाहिये।[10] इससे यह स्पष्ट होता है कि वायु के निरोध से आयु की वृद्धि होती है इसलिए प्राणायाम करना चाहिये। सिद्धान्तग्रन्थों में यह भी बताया गया है कि जब तक शरीर की नाड़ियाँ मल से पूर्ण हैं तब तक मध्य नाड़ी सुसुम्णा में वायु का संचार नही हो सकता। इसलिए मन का उन्मनीकरण करने के लिए प्राणायाम नितांत आवश्यक है।[11] प्राणायाम के बाह्यवृत्ति, आभ्यन्तरवृत्ति, स्तम्भवृत्ति भेद से तीन प्रकार बताये गये हैं यह देश, काल और संख्या से देखा हुआ लम्बा और हल्का होता है।[12] सिद्धसिद्धान्त पद्धति में रोचक, पूरक, कुम्भक और संघट्टकरण नामक प्राणायाम के चार भेद बताये गये हैं। हठयोग प्रदीपिका में प्राणायाम के कुम्भक आदि भेदों के अनेक प्रकार बताये गये हैं अकेले कुम्भक के सूर्यभेदन, उज्जायी, सीतकारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्छा और प्लाविनी नाम के आठ प्रकार बताये गये हैं।[13] इसी प्रकार और भी भेदों के कई उपभेद बताये गये

हैं इस प्रकार इनका भी विशेष विवरण आकर ग्रन्थों में ही द्रष्टव्यय है। अष्टांग और षडंगयोग में अगला अंग प्रत्याहार है। सिद्धसिद्धान्त पद्धति में बाह्य विषयों से इन्द्रियों को हटाकर उन्हें अन्तर्मुख करना प्रत्याहार बताया गया है। विवेकमार्तण्ड में इसे विस्तार से समझाते हुये कहा गया है कि अपने–अपने बाह्य विषयों में भटकती हुई नेत्रादि इन्द्रीयों को वापस लौटाना (अन्तर्मुखी बनाना) प्रत्याहार कहलाता है। जैसे तीसरे पहर में सूर्य अपनी प्रभा को समेट लेता है उसी प्रकार से प्रत्याहार नामक तीसरे अंग की साधना में योगी बाह्य विषयों के सम्पर्क से होने वाले प्रभावों से चेतना को मुक्ता करता है अपिच जैसे कूर्म (कछुआ) अपने बाहर निकले अंगो को आवश्यकतानुसार वापस शरीर में संकुचित कर लेता है वैसे ही योगी को भी बाह्यविषय वृत्तियों से अपनी इन्द्रियों को प्रत्याहृत कर लेना चाहिये।[14] ऐसा ही वर्णन योग–पद्धति में भी आया है।[15] आठ योगागों के क्रम में पाँचवां स्थान ध्यान का है। सिद्धसिद्धान्त पद्धति में ध्यान का लक्षण–निरूपण करते हुये सब प्राणियों में समदृष्टि को ध्यान कहा है। वहाँ इसे सकल और निष्कल भेद से दो प्रकार बताया गया है। सकल और निष्कल को ही सगुण और निर्गुण ही बताया गया है।[16] निर्मल और गगनाकार आत्मा को सर्वगत रूप में ध्यान कर योगी मुक्ति पाता है।[17] ध्यान के गुदा, मेढ्रू, नाभि हृदय, कण्ठ, घटिका, लम्बिका स्थान, भ्रूमध्य और ब्रह्मरन्ध नामक 9 स्थान बताये गये हैं। इन्हीं स्थानों में ब्रह्मात्मक तेज श्रेष्ठ शिवज्योति का ध्यानकर उसे जानकर योगी मुक्त हो जाता है ऐसा गोरक्षनाथ ने कहा है। इसकी महिमा बताते हुये यहाँ तक कहा गया है हजारो अश्वमेध और साकड़ो बाजपेय यज्ञ ध्यानयोग की एक कला के भी बराबरी नहीं कर सकते।[18] ध्यान के पश्चात अगला और सातवां अंग धारण है। सिद्धसिद्धान्त पद्धति में इस विषय में कहा गया है कि बाहर और भीतर सबकुछ आत्मत्व रूप में अन्तःकरण से साधना धारण है जो–जो उत्पन्न होता है उसे निराकार में धारण करना चाहिये और आत्मा को वातविहीन स्थान में स्थित दीप के समान धारण करना चाहिये।[19] अन्यत्र कहा गया है कि हृदय में मन एवं प्राणवायु को निश्चल करके पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पंचभूतों को पृथक–पृथक संधारण करना धारण कहलाती है। इस विवरण देते हुए कहा गया है कि जो पृथ्वी हरिताल अथवा सुवर्ण के समान रमणीय वर्ण अधिष्ठात् देवता ब्रह्मा सहित चतुष्कोणाकार मध्य में (लं) बीज युक्त है इस (लं) पृथ्वीतत्व को हृदय में ध्यान करके भावना करना उक्त भूमण्डल में आप भी लीन हो चित्त सहित प्राण को लीन करके पाँच घटी स्तम्भन करने वाली धारण होती है। इस धारण के सर्वदा अभ्यास से पृथ्वी तत्त्व अपने वश में हो जाता है। इसी प्रकार जल, तेज, वायु और आकाश के सम्बन्ध में भी इनके वशीकरण के लिए धारण बतायी गयी है।[20] यह भी बताया गया है कि स्तम्भिनी, द्राविणी, दाहनी, भ्रामिणी और शोषणी ये पाँच धारणायें होती हैं। इन पाँचों धारणाओं का स्थिराभ्यास करने से साधक सब दुःखों से मुक्त हो जाता है। धारण से मन में धैर्य बढ़ने

से उत्तम ज्ञान मिलता है इससे अद्भुद चैतन्य प्राप्त होता है।[21] अष्टांगयोग का आठवां अन्तिम अंग समाधि है। सिद्धसिद्धान्त पद्धति में कहा गया है कि सब तत्त्वों की समावस्था, निरूद्यमता और अनायासस्थितिमत्ता समाधि है। वहीं विवेक मार्तण्ड का उद्धरण देते हुए कहा गया है जब प्राण सल्लीन हो जाता है, और मन भी विलीन हो जाता है तब समरसता की स्थिति होती है और यही समाधि कहलाती है।[22] गोरक्ष पद्धति में कहा गया है कि भूख–प्यास, सीत–उष्ण, सुख–दुःख इत्यादि द्वन्द्व कहलाते हैं इनसे पीड़ा न होने तथा इनसे उद्वेग न होने का जो ऐक्य है अर्थात जीवात्मा परमान्तमा का कारण मात्र रूप से ऐक्य है। समस्त संकल्पो–विकल्पों का वह समाधि कहलाती है। जैसे जल में सेंधा नमक देने से दोनों की एकता दिखायी देती है वैसे ही बाह्य विषयों से विमुख होकर अन्तर्मुख होने पर आत्माकार वृत्ति होने से आत्मा और मन का ऐक्य होता है जीवात्मका और परमात्मा इसी ऐक्य को समाधि कहते हैं जब योगी समाधि में स्थित हो जाता है तब उसको जरा एंव मरण पीड़ित नहीं करते अर्थात् वह अजर–अमर हो जाता है।[23] इस प्रकार सिद्धसिद्धान्त, अवधूतमत या नाथयोग में अष्टांगयोग का वर्णन मिलता है किन्तु नाथ हठयोग साधना में यह पातंजल योग से बहुत भिन्न रूप में वर्णित नहीं है। नाथयोग साधना की विशिष्ट पहचान हठयोग के कारण है जिसमें शट्चक्र भेदन, नादानुसन्धान, कुण्डलिनी जागर, मुद्राबन्ध तथा कायागढविजय आदि का विशेष महत्त्व है, इनका विवरण दिये बिना पातंजल योग साधना से नाथ योग साधना का वैशिष्ट्य स्पष्ट नहीं होता इसलिए यहाँ उसका उल्लेख आवश्यक है। षड्चक्र, षोडशाधार, द्विलक्ष्य और व्योमपंचक की चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। जैसा कि बताया जा चुका है नाथ योगी पिण्ड में ब्रह्माण्ड की कल्पना करते है। तद्नुसार कूर्म पादतल में बसता है, पाताल पादांगुष्ठ में बसता है, तलातल अंगुष्ठ के अग्र भाग में, महातल पादपृष्ठ में, रसातल गुल्फ में, सुतल जांघों में, वितल जानु में, अतल ऊरू में इस प्रकार सातों पाताल पिण्ड में बसते हैं। यहाँ रूद्र देवता आधिपत्य में रहते हैं। इनकी कालाग्नि रूद्र संज्ञा है। भू–लोक गुदा स्थान में बसता है, भुवः लिंग स्थान में और स्वः नाभि स्थान में रहता है। इस प्रकार इन तीन लोगों के देवता इन्द्र हैं जो पिण्ड में सब इन्द्रियों के नियामक रूप में रहते हैं मेरूदण्डांकुर में महर लोग है, दण्डकुहर में जनलोक, जण्डनाल में तपोलोक, मूलकमल में सत्यलोक इस प्रकार उक्त चारों लोगों के अधिदेवता ब्रह्माा हैं। कुक्ष में विष्णुलोक है यहाँ विष्णु का वास है, हृदय में यद्रलोक, वक्षस्थल में ईष्वरलोक, कण्ठमूल में सदाशिवलोक, कण्ठमध्य में नीलकण्ठलोक, तादुद्वार में शिवलोक, लम्बिकामूल में भैरवलोक, लम्बिका में भीतर महासिद्धलोक, ललाट में महासिद्धलोक, श्रृंगाट में कुललोक, नलिनी स्थान में अकुलेशलोक, ब्रह्मरन्भ्र में परब्रह्मलोक, ऊर्ध्वकमल में परापरलोक, त्रिकुटी स्थान में शक्तिलोक बसता है। इसी प्रकार पिण्ड में ही सातों समुद्र नवखण्ड पृथ्वी, मेरूपर्वत आदि की स्थिति बतायी गई है। इस प्रकार पिण्ड में ही ब्रह्माण्डकी कल्पना कर साधक को बाह्य जगत से अपनी वृत्तियों को मोड़कर अन्तरजगत में लीन

करने का कहा जाता है।[24] एक स्थान पर कहा गया है जो साधक अपने शरीर में एक स्तम्भ नवद्वार और पाँच अधिदेवताओं को नहीं जानता वह सिद्धि कैसे पा सकता है।[25] विवरण में बताया गया है यह शरीर ही गृह है जिसमें सकल वासनाओं का आश्रय मन एक मात्र स्तम्भ है। इसके घर में मुखनेत्रादि नवद्वार है तथा पृथ्वी आदि पाँच तत्वों के ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र, ईश्वर और सदाशिव पाँच देवता है।[26] इसी अध्याय में पहले नौ चक्रों का वर्णन किया जा चुका है। हठयोग साधना में षट्चक्रों का विवरण मिलता है। इनमें पहला आधारचक्र है जो चतुर्दल है, स्वाधिष्ठानचक्र में षट्दल कमल है। नाभिचक्र दस दल का है और हृदयचक्र द्वादशदलकमल वाला है, कण्ठचक्र शोडसदल कमल का है, भ्रूमध्य में द्वदल कमल तथा ब्रह्मरन्ध्र में सहस्रदल चक्र है। इन सभी कमलदलों में विभिन्न वर्णो की स्थिति बतायी गयी है। मूलाधार में जो चतुर्दल कमल है उसके मध्य में त्रिकोणाकार योनि है जिसकी वन्दना समस्त सिद्धजन करते हैं यह 50 वर्णो से बनी हुई कामाख्यापीठ कहलाती है। पूर्वोक्त त्रिकोणाकार योनि में सुषुम्णा द्वारा के सम्मुख स्वयम्भू नामक जो महालिंग है उसके सिर में मणि के समान देदीप्यान बिम्ब है यही कुण्डलिनी जीवाधार, शरीराार मोक्ष द्वारा है। मेढू से नीचे मूलाधार कणिका में तपे हुये स्वर्ण के समान वर्ण वाला, विद्युत के समान चमक–दमक वाला जो त्रिकोण है वही कालाग्नि का स्थान है। लिंगमूल से ऊपर नाभि के कुछ नीचे कन्द के सदृश समस्त नाड़ियों का मूल पक्षी के अण्डे के समान आकार वाला है इससे 72 हजार नाड़ियों में 72 नाड़ियों को मुख्य बताया गया है। इनमें भी प्राणवाहिनी 10 नाड़ियाँ ही प्रधान हैं। जिनके नाम इडा, पिंगला, सुषुम्णा, गान्धारी, हस्तिजिह्वा, पूषा, यसस्विनी, अलम्बूसा, कुहू और सांख्यिनी नाम हैं इस नाड़िमयचक्र को योगाभ्यासी को अवश्य जानना चाहिये। इन नाड़ियों के ज्ञान के पश्चात् इन नाड़ियों में प्रवहमान वायु को जानना चाहिये प्रणायाम द्वारा जिनकी साधना से नाड़ीशोधन होता है। नासिका के वामभाग में इडा, दायीं ओर पिंगला और इनके मध्य में सुषुम्णा नाड़ी है इन तीनों की जड़ मूलाधार चक्र की कणिका का त्रिकोण है जिसके वाम कोण से इडा, दक्षिणी कोण से पिंगला और पश्चिम कोण से सुषुम्णा नाड़ी उत्पन्न हुई है। ये तीनों नाड़ियाँ उक्त चक्रक को अंकमाल किय है और अपनी–आपनी ओर के नासिका छिद्र से ब हती हैं इनके मध्य स्थित सुषुम्णा मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्त प्रवाहित होती हैं। अन्य दस नाड़ियों में वामनेत्र में आन्धारी, दक्षिण नेत्र में हस्तिजिह्वा, दक्षिण कर्ण में पूसा, दक्षिण वाम कर्ण में यशस्विनी और मुख में अलम्बुषा है। लिंग देश में कुहू और मूलस्थान में संखिनी ये दो उस कन्द से अधोमुख होकर नीचे को गयी हैं और ऊर्ध्व मुख होकर ऊपर को हैं इस प्रकार उक्त दस नाड़ियाँ प्राणवायु के एक–एक मार्ग में स्थित हैं।[27] यही नाथयोग में वर्णित दस वायुओं का भी परिचय प्राप्त कर लेना चाहिये। इनके नाम हैं प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनन्जय, हृदय में प्राण, गुदामण्डल में अपान, नाभि स्थान में समान, कण्ठमध्य में उदान, और सम्पूर्ण शरीर में व्यान का संचार है यहा पाँच ही प्रधान

नाड़ियां है। शेष प्राणों के स्थान क्रमशः डकार में नाग, नेत्रों के उनमिलन में कूर्म, छींक में क्रिकर और जमाहीं लेने में देवदत्त वायु का निवास बताया गया है। धनन्जय वायु के बारे में बताया गया है कि यह सोर शरीर में व्याप्त रहता है और मृत शरीर में भी चारघटि पर्यन्त स्थित रहता है। ऊपर से आज्ञाचक्रगत प्राणवायु नीचे मूलाधार स्थित अपान वायु को तथा मूलाधारगत अपान वायु आज्ञाचक्र स्थित प्राणवायु को परस्पर आकृष्ट करते हैं योगाभ्यासी पुरूश प्राणायाम से इन्हीं को जोड़ता है। इसी योग को हठयोग कहते हैं जो सूर्य और चन्द्रमा का योग भी कहलाता है। कहा गया है कि हकार से जब श्वांस बाहर निकलता है और सकार से पुनः प्रविष्ट होता है। इस प्रकार श्वासोच्छ्वास की क्रिया से जीव हमेंशा हंसमंत्र (अजपागायत्री) का जप करता रहता है। सूर्योदय से सूर्यास्त तक 60 घड़ी में इस मन्त्र की जप संख्या 21,600 होती है इतना जप जीव स्वयं करता है। यह अजपा गायत्री योगियों के लिए मोक्षदायनी कही गयी है। इसकी जैसी न कोई विद्या है न इसका जैसा कोई जप और ज्ञान है। कुण्डलिनी महाशक्ति से उत्पन्न हो रही तथा प्राणवायु को धारण करने वाली यह अजपा गायत्री जीवात्मा की शक्ति प्राणविद्या स्वरूप भी है जो इस महाविद्या को जानता है वही वेदविद् है।[28] 72 हजार नाड़ियों के उत्पत्ति स्थान पूर्वोक्त कन्द के ऊपर मणिपूरचक्रकर्णिका में आठ वृत्त करके वेष्टित हो रही कुण्डलिनीशक्ति ब्रह्मरन्ध्र द्वारा के मुख को रोकर स्थित है। जिस मार्ग द्वारा जन्म मरण के दुःख हरण करने वाला अखण्ड ब्रह्मानन्द पद मिलता है उस मार्ग को रोककर सोयी हुई कुण्डलिनी प्राण वायु के उत्तेजित करने से प्रबुद्ध होकर मन एवं प्राणवायु सहित सुषुम्णा नामक मध्य नाड़ी से ऊपर की ओर जाती हें जैसे कुन्जी से ताला खोलने पर कपाट खुल जाता है वैसे ही कुण्डलिनी द्वारा योगी मोक्षद्वार को खोल देता है।[29] कुण्डलिनी जागरण द्वारा शक्ति का शिव से सामरस्य रूप संगत प्राप्त करने के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए मुद्रा और बन्ध का ज्ञान और इनका अभ्यास भी हठयोग साधना का अनिवार्य अंग है। गुरू की कृपा से जब कुण्डलिनी शक्ति जागृत हो जाती है तब शरीर में स्थित समस्त षट्चक्रों का भेदन करती हुयी वह परमशिव के निवास स्थान सहस्रारचक्र तक पहुँचने की स्थिति में होती है। इस प्रकार हठयोग की उक्त साधना पद्धति से साधक है।

संदर्भ सूची

1— द्रष्टव्य – नाथसम्प्रदाय ग्रन्ध में पृ0–138 पर उद्धृत–
द्विधा हठः स्यादेकस्तु गोरक्षादिसुसाधितः ।
अन्योमृकण्डुपुत्राद्यैः साधितो हठसंध्यकः।।

2— द्रष्टव्य – नाथसम्प्रदाय, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0–137

3— द्रष्टव्य – हकारः कथितः सूर्य ठकारस्चन्द्र उच्चयते।
सूर्याचन्द्रमसोर्योगात् हठयोगोनिगज्यते।।

4— द्रष्टव्य – नाथसम्प्रदाय, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0–137 तथा हठयोग प्रदीपिका 3/15

5— द्रष्टव्य – नाथसम्प्रदाय, पृ0–137

6— द्रष्टव्य – प्राणतोषिणी, पृ0–835, नाथसम्प्रदाय, पृ0–137 पर उद्धृत

7— द्रष्टव्य – हठयोग प्रदीपिका, श्लोक सं0–2/1
8— द्रष्टव्य – वही, श्लोक सं0–2/2
9— द्रष्टव्य – वही, श्लोक सं0–2/3
10— द्रष्टव्य – वही, श्लोक सं0–2/4, 5, 6
11— द्रष्टव्य – हठयोग स्वरूप एवं साधना, योगी आदित्यनाथ, पृ0सं0–114
12— द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति, द्वितीय उपदेश, पृ0सं0–42
13— द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–48
14— द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–49–50 पर उद्धृत –

चरतां चश्रुरादीनां विषयेषु यथाक्रमम्।
तत्प्रत्याहरणं तेषां प्रत्याहारः स उच्यते।।6।।
यथा तृतीयकालस्थो रविः प्रत्याहरेत्प्रभाम्।
तृतीयाङ्.गस्थितो योगी विकारं मानसं तथा।।7।।
अङ्.गमध्ये यथा ङ्.गानि कूर्मः सङ्.कोचमाहरेत्।
योगी प्रत्याहरेदेवमिन्द्रियाणि तथात्मनि।।8।।

15— द्रष्टव्य – योगपद्धति, पृ0 सं0–76, श्लोक सं0–2/30
16— द्रष्टव्य – वही
17— द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ0–51 पर उद्धृत श्लोक
18— द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–51
19— द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ0–52
20— द्रष्टव्य – गोरक्षपद्धति, पृ0सं0–82, द्वितीय शतक
21— द्रष्टव्य – वही
22— द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ0सं0–54, द्वितीय प्रकरण में उद्धृत विवेकमार्तण्ड के श्लोक
23— द्रष्टव्य – गोरक्षपद्धति, द्वितीय शतक, पृ0सं0–91–92
24— द्रष्टव्य – सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ0सं0–57 से 69 तक तृतीय उपदेश
25— द्रष्टव्य – गोरक्षपद्धति, प्रथम शतक, श्लोक सं0–14
26— द्रष्टव्य – वही
27— द्रष्टव्य – गोरक्षपद्धति, प्रथम शतक, पृ0सं0–91 से 24 तक
28— द्रष्टव्य – वही, पृ0सं0–25
29— द्रष्टव्य – गोरक्षपद्धति, प्रथम शतक, श्लोक सं0–51